B.A. (Hons) Part II

Philosophy Paper III

Topic कर्तव्य और दायित्व

Dr. Sachidanand Prasad.
Dept. of Philosophy.
R.R.S. College, Mokama.

कर्तव्य और दायित्व सापेक्ष है। कर्तव्य अर्थात वैसा कर्म जो करना चाहिए, मनुष्य के नैतिक जीवन का तत्व है। मनुष्य को क्या करना चाहिए इसी का ज्ञान ही नैतिक ज्ञान का सार है। कर्तव्य मनुष्य के विवेक और वासनाओं के द्वन्द्व का संकेत करता है। यदि यह द्वन्द्व नहीं होता और जैसा चाहिए वैसा ही कर्म मनुष्य करता तो फिर कर्तव्य की आवश्यकता नहीं होती। विवेक और वासना में द्वन्द्व होने के कारण ही ये दोनों व्यक्ति को अपनी ओर ~~खींच~~ खींचते हैं। इनमें वह जो नैतिक नियम के अनुसार है, उचित है और ऐसे कर्मों की ही बाध्यता व्यक्ति महसूस करता है। यही उसका कर्तव्य है। अर्थात वैसे कर्म जिनकी संगति नैतिक आदर्श से हो वे उसके कर्तव्य हैं और वह उन्हें करने के लिए बाध्य होता है। कर्तव्य एक प्रकार का नैतिक ऋण है, जो

मनुष्य को चुकाना चाहिए। कर्तव्य के साथ ही दायित्व लगा रहता है। जब हम जान जाते हैं कि यही कर्तव्य है तो ऐसा ही करना चाहिए की भावना उसी में छिपी हुई रहती है और इसी भावना को दायित्व कहा जाता है। फिर निश्चित और अनिश्चित कर्तव्यों का भी भेद किया गया है। वैसा कर्तव्य जो वैधानिक होते हैं, निश्चित हैं और वे जो अन्तःकरण के आदेशों पर निर्भर हैं, अनिश्चित होते हैं। कुछ विचारकों ने प्राकृतिक और कृत्रिम कर्तव्यों का भेद बतलाया है। वैसा कर्तव्य जो प्राकृतिक संबंधों से, अर्थात् मनुष्य के स्वभाव के कारण है, उन्हें प्राकृतिक कर्तव्य कहा जाता है। जैसे- पिता पुत्र का संबंध प्राकृतिक है इसलिए पिता का अपने पुत्र के प्रति जो कर्तव्य है, वह प्राकृतिक कर्तव्य है। वैसा कर्तव्य जो कृत्रिम संबंधों से निकलते हैं, उन्हें कृत्रिम कर्तव्य कहा गया है फिर वैसा कर्तव्य जो सभी के लिए है उसे सामान्य कर्तव्य कहा जाता है और जो विशेष व्यक्तियों या परिस्थितियों के लिए है, उन्हे विशेष कर्तव्य कहा जाता है। वास्तव में हमारा एक ही सर्वोच्च कर्तव्य है। विवेकयुक्त आत्मा की पूर्ति और उसके अन्तर्गत सभी कर्तव्यों का पालन ही सर्वोच्च कर्तव्य है।